International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 04-03-2021, Accepted: 05-04-2021, Published: 17-05-2021
Volume 7, Issue 3, 2021, Page No. 18-22

तुलसी के आदर्श आज के परिपेक्ष्य में

सविता सोनी

उ.मा. शि.शा. उत्कृष्ट विद्यालय, शाजापुर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश

भारतीय इतिहास के मध्यकाल के ठीक "स्वर्णयुग" के बीच तुलसी उसे कलयुग के रूप में उदघोषित करते और अपने काव्य की समस्त चेतना तथा शक्ति से उसको चुनौती देते हैं । तुलसी का रामचरित मानस हिन्दी साहित्य का दर्पण है, तत्कालीन समाज का दपर्ण है, संस्कृतिक दस्तावेज है । भारत के परम्परागत विश्वासों तथा पौराणिक कथाओं का भन्डार हैं। वह हिन्दी साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है । जिसमे काव्य शास्त्र के सभी विषयों के उदाहरण मिलते हैं इसलिये रामचिरत मानस का ऐतहासिक महत्व है और सदा रहेगा । रामचन्द्र शुक्ल जी का मानना है कि गोस्वामी जी की भक्ति पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता है - सर्वांग पूर्णता । जो जीवन के किसी भी पक्ष को छोड़कर नही चलते सभी पक्षों के साथ उसका सामंजस्य है न कर्म से या धर्म से विरोध न ज्ञान से । धर्म तो नित्य लक्षण है । तुलसी की भक्ति, धर्म, और ज्ञान दोनों की रसानुभूति कह सकते हैं । इसमे योग का भी उतना ही समन्वय है ।

तुलसी का साहित्य पूरणमासी के चांद की तरह चमकने के कारण ही साहित्य जगत में "सूर -सूर तुलसी ससि" की उक्ति प्रचलित है और सत्य भी है क्योंकि तुलसी के साहित्य में जहां भक्ति के विभिन्न स्वरूप हैं वहीं अर्थ की गंभीरता, सरसता, प्रभावशीलता, अभिव्यंजना कौशल भी है । ऐसा साहित्य में कोई और तुसली का साहित्य, शास्त्र ग्रन्थों का निचोड़ नही है ।

साहित्य में लोक मंगल की भावना तथा धर्म व मर्यादा के प्रति चैतन्य भी है। साहित्य में धर्म, संस्कृति तथा संस्कारों की त्रिवेणी बहती है और यही साहित्य का लोकरंजक रूप जन जन तक पहुँचाया रामचरित मानस से । अपने आराध्य राम को अवतारी मानव के रूप में कई आदर्श स्थापित करे हैं तो कहीं दुष्टहन्ता, गरीबनिवाज, धर्मसंरक्षक तो कहीं शरणागत भक्त वत्सल के रूप मेंे वर्णन किया है । इसमे शक्ति- शील और सौन्दर्य का अदभुत समन्वय है यही कारण है की रामचरित मानस विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ है ।

रामचरित मानस आज के संदर्भ में देखें कि कैसा परिवार, कैसी राजनीतिक व्यवस्था तथा समाज में कैसे नैतिक गुणों का तथा विभिन्न मनोंभावोंं का प्रसार हो।यही कारण है कि मानस का उद्देश्य आज के परिपेक्ष्य में अपनी प्रसांगिकता बनाये हुये है ।

मूल शब्द: संस्कृतिक दस्तावेज, साहित्य में धर्म, संस्कृति तथा संस्कार

प्रस्तावना

जब जीवन में क्लेश, पीडा, निराशा, त्रास में घिर जाता हैं तो वह जड़ता, अज्ञान में विवेकहीन होकर, लक्ष्यहीन होकर ठोकरे खाता हैं। इस भटकाव में महान व्यक्ति या साहित्य ही सही दिशा देने का कार्य करते हैं। जीवन के सत्य को पहचानना सिखाते हैं जिस प्रकार सूर्य, बादल में छिपकर अपने अस्तित्व को छिपा नहीं सकता उसी प्रकार सत्य के मार्ग की विश्व में प्रतिष्ठा हैं|

महापुरूषों का जीवन सत्य से ओतप्रोत हैं और दूसरों से भी ऐसी चाहत रखते हैं। रामचरित मानस महा काव्य में स्थान स्थान पर सत्य के आदर्श हैं। जो

मनुष्य को सदेंश देकर भटकाने से बचाकर और सही रास्ता दिखाते हैं।

आज नैतिकता का पतन, सुनने की क्षमता खत्म होना, समाज में जाति वर्ण के नाम पर भेद होना परिवारिक कलह, इन्द्रियों पर नियंत्रण न होना पूजा पाठ और आध्यात्म से दूर होकर कामवृतियों के प्रति आशक्त हो रहा हैं। मनुष्य के अन्दर समानता का भाव खत्म हो रहा हैं। नारी की मर्यादा खत्म होती जा रही हैं। मनुष्य के अन्दर समपर्ण एवं निष्काम भाव खत्म होता जा रहा हैं। रामचरित मानस इन सभी अवगुणों को गुणों में बदलने की क्षमता हैं।

भक्ति- धार्मिक समन्वय की भावना

तुलसी अपने समय के भक्त कवि हैं| द्वैतवादी कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं, पर निर्गुण एवं सगुण में समन्वय स्थापित करके अद्वैतवाद का भी समर्थन करते हैं -

जैस व्यापि रहे संसार महु माया कटक प्रचंड।।

तुलसी के काव्य में नौ भक्ति (नवधा भक्ति) के सभी रूप मिलते हैं- श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, साख्य, आत्म निवेदन आदि भाव मिलते हैं।

हिन्दी साहित्य के स्वर्णयुग के एक महान भक्त प्रबुद्व कवि, एवं तत्व दृष्टा तथा दार्शनिक कवि के साहित्य में समन्वय की विराट साधन की गई हैं। इसका कारण सुन्दर काव्य शक्ति तथा धार्मिक भावना है| उनका साहित्य कवि की प्ररेणा नहीं बल्कि चिंतन का जागरूक स्वरूप हैं। समन्वय इनकी लोकप्रियता का मुख्य कारण है। हजारी प्रासद द्विवेदी ने समर्थन में कहा हैं - "काव्य की सफलता का एक और रहस्य उनकी अपूर्व समन्वय शक्ति में हैं।

सच्चे अर्थों में तुलसी संत थे जिसने भौतिक वैभव की क्षण भगुंरूता को पहचाना तथा आत्मसाक्षात्कर के सौपना तक पहुँचाया। जहां मोहाकार्षण निरर्थक हो जाते हैं। धर्म में शैव-वैष्णव शाक्तों के विभिन्न सम्प्रदाय कट्टरता की ओर बढ़ रहे थे। वही जनमानस ज्ञान, कर्म और भक्ति के बीच चुनाव को लेकर असमंजस्य में थे । राजा,प्रजा तथा वेद शास्त्र में फासला बढ़ता जा रहा था। ऐसे समय में साहित्यिक विद्वान जायसी की भारतीय प्रेम व लोक कथाओं एवं कबीर के हिन्दु मुस्लमान, गरीब-अमीर, उच्च-निम्न, जातियों के बीच सामजस्य बनाने का प्रयास मानस ने किया और सभी विरोधों को समन्वयवादी दृष्टि का परिचय देकर दार्शनिक मत स्थापित किया।

आचार्य द्विवेदी ने तुलसीदास को बुद्ध के बाद का सबसे बडा लोकनायक सिद्ध करते हुए कहा है कि - "लोक नायक वही हो सकता हैं जो समन्वय स्थापित कर सके"। तुलीसदास ने राम के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूप को माना हैं।

अगुन - सगुन दुई ब्रहम स्वरूपा।
अकथ अगथ अनादि अनूपा।।

दोनो के लिये उदाहरण दिया हैं -

एक दारूगत देखिए एकू।
पावक जुग सम ब्रहम विवेकू।।

अर्थात् अग्नि के दो रूप हैं एक व्यक्त दूसरा अव्यक्त इसका दारूगत अव्यक्त रूप ही व्यक्त होने पर दृष्यमान हो जाता हैं।

अगुन अरूप अलाव अज जोई।
भगत प्रेमबस सगुन सो होई।।

तुलसी का मनना है कि श्रेष्ठ भक्ति सगुन हैं क्योकि निर्गुण उपासना योगियों तक ही सीमित हैं। सगुण के अधिकारी सभी मनुष्य हैं। जो भक्ति समन्वय में दिखाया गया वह तो विचित्र और अद्भभुत हैं।

भगतिहिं, ग्यानहिं नहि कुछु भेदा।
उभय हरहि भव सम्भव खेदा।।

तुलसी की भक्ति कालयुग के पापों को नष्ट करने वाली तथा काम, क्रोध, मोह, अंहकार दूर करने वाली हैं।

शासन व्यवस्था में समन्वय (राजा प्रजा मैं समन्वय)

तुलसी कालीन शासन व्यवस्था भी कई प्रकार के अन्तर्विरोधों से ग्रस्त हो चुकी थी। मुगलशासकों का असली उद्देश्य प्रजा-पालन और प्रजा-रंजन न होकर अपने साम्राज्य की स्थापना, निजी योग क्षेम और भोग विलास ही था और इसके लिए जनता की मेहनत की कमाई खर्च की जा रही थी इसलिए प्रजा भी असंतुष्ट होकर अपने मन मुताबिक रास्ते पर चलने के लिए बाध्य थी। अर्थात् राजा और प्रजा की बीच की दूरी निरन्तर बढती जा रही थी जो कि समाज के लिए बहुत खेद जनक बात थी। तुलसी ने 'रामचरितमानस' के उत्तरकांड में कलियुग वर्णन के माध्यम से इसी स्थिति का चित्रण किया है और मात्रचित्रण ही नहीं किया है बल्कि इस स्थिति को सुधार ने का, इनके फासले को कम करने का प्रयास भी किया है। 'रामराज्य' के रूप में एक आदर्श शासन व्यवस्था की स्थापना अपने साहित्य के माध्यम से करते हुए तुलसी बताते हैं कि किसी भी देश और समाज की सुख. समृद्धि के लिए शासक व जनता का समन्वित प्रयास अपेक्षित है। उनके अनुसार एक शासक या कहें कि अच्छे शासक को मुख की भांति होना चाहिए जो समस्त शरीर रूपी प्रजा का पालन ृ पोषण भली प्रकार से करे.

"मुखिया मुख सो चाहिए खान पान कौ एक।
पालई पोषई सकल अंग तुलसी सहित विवेक।।"[10]

साथ ही वे यह भी कहते हैं कि सिर्फ एक तरफा प्रयास ही इस सामंजस्य के लिए पर्याप्त नहीं है, प्रजा को भी अपना पूरा सहयोग देना चाहिए और इसीलिए उन्होंने एक अच्छे सेवक के कर्तव्य निर्धारित करते हुए उन्होंने कहा है.

"सेवक कर पदनयन सेए मुख सो साहिबु"

इस प्रकार दोनों की सामंजस्य पूर्ण भागीदारी से ही जीवन सुचारू रूप से चल सकता है।

पारिवारिक समन्वय तथा संस्कारों का विकास

यह समन्वय और सहयोग केवल राजा-प्रजा के लिए ही नहीं बल्कि एक परिवार के लिए, उसके सदस्यों के लिए भी उतना ही आवश्यक है। और फिर पारिवारिक व नैतिक मूल्यों के पक्षधर मर्यादावादी तुलसी ने देखा कि समाज में पारिवारिक मान्यताएँ लगभग समाप्त होती जा रही हैं। पति-पत्नी, पिता-पुत्र,भाई-भाई में जो स्नेह संबंध होना चाहिए वह भी लगभग समाप्ति की ओर है। पिता और पुत्र दोनों स्वार्थ प्रेरित हैं। पति-पत्नी के संबंधों में आत्मीयता का दिखावा अधिक हो गया है। पुत्र शादी होते ही पत्नी का साथ पाकर माता-पिता को बेसहारा छोड देता है। शिक्षा का उद्देश्य ज्ञानार्जन न होकर धनार्जन रह गया है। पुरूष 'पर त्रिय लंपट कपट सयाने' हो गए हैं और स्त्रियाँ 'गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारी पर पुरूष अभागी।।' हो गई हैं। तुलसीदास ने अपने 'रामचरितमानस' में जिसे विद्वानों ने 'व्यवहार का दर्पण' भी कहा है, जीवन मुल्यों की, नैतिक मूल्यों की व पारिवारिक मूल्यों की पुनः स्थापना का प्रयास किया है। पारिवारिक संबंधों का निर्वाह, सदस्यों का व्यवहार, एक-दूसरे के प्रति कर्तव्य, निष्ठा, त्याग आदि को ध्यान मे रखकर तुलसी ने राम, लक्ष्मण, भरत, सीता, हनुमान, सुग्रीव, विभीषण आदि के माध्यम से जो उदात्त चरित्र व आदर्श जीवन मानस में प्रस्तुत किया है वह इनकी समन्वय साधना का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। तुलसी के राम एक आदर्श राजा, आदर्शपुत्र,पति व मित्र के रूप में पाठक के सामने आते हैं तो भरत व लक्ष्मण आदर्श भाईयों का दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं जिनके बीच सिंहासन पाने के लिए संघर्ष न होकर त्याग है, एक दूसरे के लिए बलिदान की भावना है। हनुमान के द्वारा तुलसी आदर्श सेवक का चरित्र उपस्थित करते हैं तो सुग्रीव के द्वारा मित्रता का पाठ पाठक को सिखाते हैं। कहने का आशय यह है कितु लसी ने अपने पात्रों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के पोषक जीवन मूल्यों को, उनके उदात्त स्वरूप को प्रस्तुत कर पारिवारिक स्तर पर समन्वय स्थापित करने की कोशिश की है जिसमें वे बहुत सफल भी हुए हैं।

जनकसुता जगजननि जानकी। अतिसय प्रिय करूनानिधान की।।
ताके जुगपद कमल मनावउँ। जासु कृपा निर्मलमति पावउँ।।

संसार की माता जिनकी कृपा से शुद्ध बुद्धि प्राप्त होती हैं। अतः हमें नारी का सम्मान करना चाहिये।

इंद्रियों पर संयम

तुमहिं निवेदित भोजन करहिं, प्रभु प्रसाद पटभूषणधरहीं।।
शीश नवाहिं सुरगुरु द्विज देखी ।प्रीत सहित कर बिना विशेषी।।
करनित करहिं राम पद पूजा। रामभरोसे हृदय नहिं दूजा।।

जिनकी नाक में प्रसाद की सुगंध है। जो आप को अर्पण कर भोजन ग्रहण करें। जिनके मस्तक गुरु के चरणों में झुकेए जिनमें विनम्रता हो एहाथ आपके चरणों की पूजा में ही लगे उन्हीं का जीवन सफल है।

काम क्रोध मद लोभ सब ए नाथ नरक के पंथ ।
सब परिहरिरघुवीरहिभजहु भजहिंजेहिसंत।।

जो काम, क्रोध, मदलोभ, राग दम्भ, छल, कपटलोभ आदि आसुरी वृत्तियाँजो मानव को दानव बना रही हैं। यह मानव के लिए कलंक है। इनसे रहित हृदय में ही प्रभु वास करते हैं ।

समत्व और विवेक

जो सुख - दुख को समान रूप से स्वीकार करे, निंदा और स्तुति को समान रूप से स्वीकारें, सत्य बोले, वह आपके सिवा किसी सहारे को नहीं स्वीकारते।

सबके प्रिय सबके हितकारी। दुख-सुख सरिस प्रसंसा गारी।।
कहहिं सत्य प्रिय वचन विचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी।।

जो उत्तम विवेक से सम्पन्न हैं। पर नारी को माॅं की दृष्टि से देखता हैं। दूसरे के धन को विष सामन त्याज्य समझते हैं।

जननी सम जाना हिं परनारी। धन पराव विष ते विष भारी।।
जे हरषहिं पर संम्पति देखी। दुखित होहिं पर विपति विसेषी।।
जो संकट सहने की क्षमता रखते हैं। वह प्रभु मदद करते हैं।
अवगुण तजि सबके गुन गहहिं। विप्र धेनु हित संकट सहहीं।।

जिनमें जॉति पाति, धन, धर्म, कुल, प्रियजन, परिवार-जन घर-वार छोडने या मोह न करने की भावना होती हैं। जो स्वर्ग-नरक का मोह नहीं करते कर्म पर विश्वास करते हैं। वह सब आपकी शरण में होते हैं।

जाँति पाँति, धनु धरम बडाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई।।
सरगु नरकु अपवरगु समाना। जँह तँह घरे धनु बना।।

निष्काम कर्म साधना

जहि न चाहिअ कबहुँ कछु, तुम्ह सब सहज सनेहु।।
बसहु निरंतर तासु मन, सो राउर निज गेहु।।

जो कभी किसी से कछु नहीं चाहते हैं। केवल सहज प्रेम करते हैं वहीं सच्चा सुख - वैभव तथा प्रसन्नता पाते हैं।

निष्कर्ष

तुलसीदास जी की धारणा है कि भगवान तक पहुंचने के लिए न सन्यास, न कर्मकाण्ड, न तपस्या, न प्रकाण्ड, ज्ञान की आवश्यकता हैं। इसके लिए भक्ति ही पर्याप्त हैं। तुलसी का मुख्य उद्देश्य हैं कि वह रामचारितमानस के सांस्कृतिक वैभव परम्परागत विश्वास तथा ऐतहासिक महत्व को व्यक्ति को समझऐ। अधिकांश मनुष्य अस्तिक हैं वह परमात्म, ईश्वर, अल्लाह का नाम जानते हैं भले ही वह अवतार

में विश्वास न करें। किंतु सभी के लिए तुलसी के भक्ति मार्ग, राज मार्ग (परलोक सुधारना) परोपकार, समन्वय भावना तथा जाति पाति के भेद भाव को नष्ट करना,विवेक से कार्य करके इन्द्रियों को वश में रखना, पारिवार में प्रेम तथा नारी का सम्मान करना आदि सभी भावनाऐं आधुनिक वर्तमान युग में हितकारी एवं प्रेरणादायक हैं।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज्य काहुहिं नहिं व्यापा।।
मृत्यु नहिं कवनिहु पीरां। सब सुन्दर सव विरूज शरीरा।।

संदर्भ सूची

1. डा. आषा पाण्डेय - तुलसीदास निरूपित मानव - धर्म की आचार संहिता
2. प्रभात मिश्रा - तुलीस की समन्वय भावना
3. बालकाण्ड - 1.116 चौपाई
4. उत्तरकाण्ड चैपाई -71(क)दोहा
5. अयोध्या काण्ड - 315 दोहा
6. अयोध्या काण्ड - 306 दोहा
7. अयोध्या काण्ड - 1.2 - 128 चौपाई
8. उत्तरकाण्ड - 7चौपाई
9. सुन्दरकाण्ड दोहा - 138
10. अयोध्या काण्ड-2चौपाई
11. अयोध्या काण्ड - 1.2 - 130,131 दोहा
12. अयोध्या काण्ड चौपाई - 3
13. अयोध्या काण्ड चौपाई - 4
14. उत्तरकाण्ड चौपाई - 1
15. बालकाण्ड चौपाई -1
16. बालकाण्ड 17 दोहा के पश्चात चौपाई-4sa